।। श्री दुर्गा आत्मबोद रहस्य स्तवः ।।

श्री श्री श्री श्री श्री १०००८ स्वामी शिशू सत्यविदेहानंद सरस्वती विरचित

।। श्री दुर्गा आत्मबोद रहस्य स्तवः ।।

हे माँ दुर्गे आप के चरण कमल हमारे हदय में रहें,

आप हमारे मानस में नित्य बसो ।

हे माँ दुर्गे

दया करो,

क्षमा करो,

कृपा करो,

ममता करो,

करूणा करो,

रक्षा करो,

छोटी कन्या बनकर हमारे साथ खेला करो ।।

मंत्र - ॐ ह्री श्रीं दुं दुर्गे चरणम् शरणम् मम्

मंत्र- ॐ ह्री दुं दुर्गाय चरणम् शरणम् मम्

।। ॐ छोटी सी बालीका, नाम उसका कालीका ।।

ॐ सर्व याचना तारणहार

१. प्रत्यक्ष - अप्रत्यक्ष अनिश्चित ।

आत्मा के यह तीन गुण है सुनिश्चित ।।

२. प्रत्यक्ष की स्थापित है दो शाखा ।

अविर्भुत एवम अभिभूत प्रशाखा ।।

३. ज्ञान विज्ञान की परीकल्पना है अविर्भुत ।

अनुभव अनुभूति स्थापती है अभिभूत ।।

४. कारण समाया है कार्य मे ।

कार्य समाया है कारण मे ।।

५. अप्रत्यक्ष की है दो शाखा ।

कला - गुण से युक्त इन्हे राखा ।।

६. कला कल्पना की आधान सज्ञा मे समाई ।

गुण अनुभव के आधान प्रज्ञा मे मलाई ।।

७. सब है प्राप्ति केवल गुरुकृपा से ।

अहम बह्म की संज्ञा अनुपा से ।।

८. प्रप्ति से ही है, नित्य दुःखता ।

प्रप्ति की प्रप्ति मे होती सहज सुखता ।।

९. ढुंढ रहे हो उपासको तुम जिसको ।
समाया है तुम मे ही पकडो उसको ।।
१०. जानो पहले वेदान्त आदी शंकराचार्य का ।
सच्चा वैराग्य यह विवेक परीपुर्ती कार्य का ।।
११. तिव्र होवे जब शिष्य वैरग्य का ज्वार ।
बढेगी क्षमता विवेक की अनासक्ती का आधार ।।
१२. संमिश्र घटनाओ से परखो सत्यासत्य ।
शक्ति है यही विवेक आत्म अनात्म ।।
१३. वस्तओंका करते शास्त्रज्ञ भौतिक शास्त्र मे विश्लेषण ।
जीवन की बुनियाद कौन सी है, यह अनुसंधान ।।
१४. आंतरीक विश्व के ऋषियो ने किया है यत्न ।
अपने अंदर न बदले जो सर्वव्यापी सत्यरतन।।
१५. वह सत्य दुर्गा है जो है सर्वव्यापी - अपरिवर्तनीय ।
समझने के यत्न से प्रप्त वह परब्रह्म कमनीय ।।
१६. समझो कि यह न होवे कभी परिवर्तनीय ।
बुद्धि से परिशीलन ब्रह्मसत्य यह विश्व-बिंदु-वेदान्तीय ।।
१७. जो कुछ सनुभव होवे नानाविधरुप हमे जगत ।
है उस परब्रह्मी का स्वरुप उदात्त ।।
१८. भव्य-दिव्य-आश्चर्यायुक्त-अपरिवर्तनिय ।
अनित्य-आनंद से रहित जगत मित्थ्या विवेकीय ।।
१९. नही है केवल यह सुखीयघटना ।
बाहर के वस्तुओ-सम्बन्धित वैराग्य प्रकटना ।।
२०. यह है प्राप्ती जिससे सुख-शांति ।
जगत के पिछे दौडती मनो की अशान्ति ।।
२१. न भागे मन हमारा जगत विश्व मे ।
रहे पूर्ण अनासक्त वैराग्य विवेक - कवित्व मे ।।
२२. सुख नही इंद्रियभोग्यवस्तु पदार्थो मे ।
शक्ति नही, है सिर्फ भावना सुख अर्थो मे ।।
२३. जाने जब साधक विवेक - बुद्ध - माध्यम् ।
मृगजलवत है सुख तत - पदार्थ साध्यम् ।।
२४. माने तब साधक सहज रुप मन से ।
ना दौडे - निकल भागे इंद्रिय भोग्य वन से ।।
२५. होता है तुम्हारा जब विश्वास ऐसा ।
कि तिन गुण है पदार्थो मे श्वास जैसा ।।

२६. वस्तु पदार्थो मे सत्य नित्य भावना ।
यह पहला गुण माने, होवे नष्ट साधना ।।
२७. वस्तु पदार्थो मे शुद्ध-नित्य-स्वरुप विश्वास ।
यह दुजा गुण करे बंद तुम्हारा श्वास ।।
२८. वस्तु पदार्थ सुख देते ऐसी श्रद्धा ।
यह तिजा गुण मुक्तिद्वार करे बद्धा ।।
२९. तब भटकेगा - तडकेगा नही यह जीव ।
इंद्रिय माध्यम अनुभावित-पदार्थ छोड बने शिव ।।
३०. विषय-वस्तुओ मे नित्य रहे अनासक्ति ।
बढाते रहो नित्य भगवति दुर्गा की भक्ति ।।
३१. बुद्धि को होवे श्रद्धा, पदार्थो मे नही सुखशक्ति ।
ना दौडे झुठे सुख मे उपयोग ले समग्र विवेक बुद्धि ।।
३२. तिव्र अनासक्ति भावना, यह है सच्चा वैराग्य ।
अत्यावश्यक है तदहेतु षड सम्पती अहमत्याग ।।
३३. शम का अर्थ मन कि शान्त - स्वस्थ - स्थिती ।
जिससे युक्त रहे सादक, बढे मुक्त - प्रतिति ।।
३४. सांसारिक क्षेत्रो से निकाल बाहर करे मनको ।
ऊतना अधिक समचित होवे मन आनंद तन को ।।
३५. विषय - वस्तु पदार्थो के शुलो को रोकना ।
खिंचकर उन्हे अपने, इंद्रियों में सोंख लेना ।।
३६. कहलाता है दम आत्मसंयमन कि क्रिया ।
शम-दम से युक्त यह तप प्रक्रिया ।।
३७. सम-शांत-चित्त मन विशयों को करे नष्ट ।
तब उपरति यह तृतिय सम्पत्ती होवे पुष्ट ।।
३८. उपरति - अर्थ - है - उपेक्षा, मन के आदेशों कि ।
साधक मे जब इस जमा हुए धन कि ।।
३९. मन को मिले शक्ति ऐसी मन बन जाए प्रशान्त चित ।
बुद्धिपदो पर - परिपूर्ण - स्थापित - बने भव्य दिव्य उदात्त ।।
४०. मन भरे श्रद्धानंद से भरणता से खुद बने शक्ति ।
बुद्धि होवे विश्वासपूर्ण - वरणता कि यह भक्ति ।।
४१. मैने पा ली है भगवति-प्राप्ति-जिवनमोलता ।
तब बुद्धि पा लेगी उच्चतम ध्येयता ।।
४२. तोड देगी वह तमाम प्रतिबन्ध ।
कटिबद्ध रहेगी बुद्धि तितिक्षा यह स्कंध ।।

४३. श्रद्धा यह पांचवी सम्पत्ति बना दे ब्रह्म ।
रखे साधक सच्ची भावना प्रमाणित ना रहे दंभ ।।
४४. मनन-चिन्तन करता रहे वेद-पुराण-ग्रंथ ।
श्रद्धा से हमेशा सौंदर्य बने अद्वैत पंथ ।।
४५. समाधान यह है छठा धन साधक का ।
अपमान-अपयशों से संवेदना शुन्य बनने का ।।
४६. साधक तुम्हारा बौद्धिक स्तर - बुनीयाद ना हिलें ।
इस से प्रकाशीत मानसिक साम्यावस्था के फुल खिलें ।।
४७. किसी भी स्थिती मे ना होवे विचलित ।
भावनाओं के उत्तुंग शिर्ष से ना हो स्लखित ।।
४८. आजकल कथा सप्ताहोंमे देंते निमंत्रण ।
सर्व मुमुक्षु जनानाम् कहकर, एकान्ति वृद्धो को आमंत्रण ।।
४९. अरे, क्या यह नियत-समय-कर्मकाण्डि मुमुक्षु है ।
क्या, अपने आप मे भुला हुआ प्रज्ञा चक्षु है ।।
५०. खोज करे जो अपने स्व-स्व स्वरुप की ।
दिव्य चेतना दुर्गा $E=MC^2$ की ।।
५१. मेरी बुद्धि शुद्ध हो यह करे चिन्तन ।
बुद्धि को ऐसा मोडे - सुने - गुने - वेदान्त प्रवचन ।।
५२. फिर करेगा चित्त - चित्त का चिन्तन ।।
बुद्धि करेगी बुद्धि का चिन्तन, होगा हृदय क्षेत्री आंदोलन ।।
५३. यह ना होवे - कोरे अधुरे मन से यत्नो का खनन ।
पूर्ण - आयुष्य भर - हर समय करना पडेगा पवित्रकरण ।।
५४. सच्चा साधक भक्त अपने जन्म का पूरा समय ।
खुद का पिछा करते खुद मे विलय ।।
५५. अविघा - कामना - कर्म यह वेदान्त मे हृदय ग्रंथी है ।
जो जिव को बना दे सिमित अपरिमित दुःखों मे पंथी है ।।
५६. खुद के व्यक्तित्व खुद सम्बध मे मैं पूर्ण हू यह अज्ञान ।।
बुद्धि मे उत्पन्न करे कामनाओं की लहरों का स्मशान ।।
५७. यही कामना यही विचार लहर बनाकर करती ।
साधक को अच्छे बुरे कर्म बंधन मे धरती ।।
५८. साधक सब जानते हुऐ भी स्वीकारे अंधे मन से ।
वह कर्म मानस मंडल में पकड बना जड-तन से ।।
५९. यह जड जमाति वासना क्षोभ-विक्षेप से जादा होवे चित्रित ।
फिर होवे बन्धन बन जाए भव-बन्धन एकत्रित ।।

६०. सत्य तत्व के अज्ञान से देखे साधक वस्तु-भाव-विचार ।
यह अथाह संसार शरिर-मन-बुद्धि से संपर्कित माया परिवार ।।
६१. नित्य परिवर्तित यह जगत बना है शिष्य माया से ।
अनगिनत निर्माण करेगा वासनाओं को संपर्कित छाया से ।।
६२. फिर वह वासनाए कराएगी और जादा कर्म ।
फिर कर्म बनाऐंगे अनगिनत वासना चर्म ।।
६३. पुन्हा वासनाए बनाती रहेंगी कर्म - चर्म ।
बेचारा साधक आबद्ध हो कैसे बचाए धर्म ।।
६४. वेदान्त मे वह साधक जिव कहलाता है ।
जिवन्त मल को साधक मल से नहलाता है ।।
६५. वासना-कर्म-फिर वासना कारण यह चक्र अविघा-अज्ञान ।
प्राप्ति ना होवे कभी आत्मभाव की लो यह संज्ञान ।।
६६. सत्य-ब्रह्म का-यह-अज्ञान अविघा व्यष्टि पद ।
उसपर फैली वासना समस्त व्याधियों का अविघा मद ।।
६७. यह समष्टि पद पर एकत्रित-बने एकदम माया ।
कहता स्वामी विदेही, पकडो दुर्गा की छाया ।।
६८. पर ब्रह्मी-दुर्गा जब ईश रुप कार्य करे ।
तब माया यह वाहक का पूर्ण कार्य करे ।।
६९. जब वह इश अविघा के द्वारा कार्य करे ।
तब जिव यह व्यक्तिगत जिवभाव का रुप धरे ।।
७०. ईश-समष्टिपद-कार्य करे अविघा द्वारा ।
तब ईश कहलाए वास्तविक ईश्वर सारा ।।
७१. जीव स्वयं भी अविघासे बनाए मन के माध्यम से ।
अपने चारो तरफ फैला हुआ-स्वयं-जगत उदयम से ।।
७२. सभी जिवो का जगत-एकत्रित कर-बने समष्टि जगत ।
जिसे पुकारते है हमलोग विश्व नाम भगत ।।
७३. पुर्ण जग यह-समष्टि वासनाओ से समष्टि मन से ।
उत्पन्नीत रहता है समष्टि द्वारा वन से ।।
७४. इस प्रकार अविघा माध्यम से कार्य तत्व है प्रभु ।
एवम समष्टि मन-माध्यम से व्यक्त तत्व है ब्रह्म विभु ।।
७५. आजकल प्रश्न करते बुद्धिजिवी ईश्वर है क्या ।
यह मुर्खतापूर्ण प्रश्न वैसे ही जैसे तुम्हे पिताजी है कया ।।
७६. तुम हो उपस्थित यह वस्तुस्थिती प्रमाण है ।
पिता के सिवा तुम हो नही सकते यह पक्का विधान है ।।

७७. भले ही ना पता हो तुम्हारे पिता का पता ।
कारण के बिना कार्य नही, स्वामी विदेही कहता ।।
७८. जीस किसी साधन प्रणालीका-अभ्यास रखे साधक जो ।
उसी प्रणाली द्वारा-शांती-आत्मसन्मान-अभ्युदय प्राप्त वो ।।
७९. बहुत से दंभी योग-मंत्र-वेद-देव झुठा बताते है ।
क्षुद्र स्वार्थ परता - पुर्वोक्त बाते सर्वथा अपने अनुकुल ना देख निंदा जताते है ।।
८०. जिस प्रकार कोइ मानव कफ दोषसे ग्रस्त होवे ।
दुध-दही-स्वादिष्ट वस्तु को - दुष्ट बताता त्रस्त होवे ।।
८१. पुन्हा वही मानव पित्त दोष उत्पन्नानंतर ।
उन्ही पदार्थो की सिद्ध करे उपयुक्तता अंतर ।।
८२. अनाधिकारावस्था से ज्वलीत मानव अधःपात ।
कहते रहे नित्य अपने, स्व मे धर्म घात ।।
८३. माया के रजोगुणो से कर्म होते है ।
काम-क्रोध-लोभ-दंभ-असुया-ईर्ष्या-मत्सर व्यक्तर्म है ।।
८४. व्यक्तित्वो के मनोस्तरो पर रजागुण से निर्माणाती ।
निम्न कोटी कौटी की भावनाए प्रखर भावनातीत ।।
८५. मनोविक्षेपो की भावनाए यह प्रतिक्रियात्मक भयंकर ।
पूण होवे वे श्रृखंलाबद्ध मानव, विक्षेप क्रिया से तनकर ।।
८६. जिवन के सभी कर्म होते है रजोगुणो से ।
बन्ध करे निर्माण यह, इस कारण रजो गुणो से ।।
८७. परीणाम इन रजोगुणोका - बंधन निम्नस्तरीय भावनाओ का ।
मानव बनाता स्वयं के - बंधन युक्त प्रस्तावनाओ का ।।
८८. मन रहता जब-क्रिया प्रवण-कर्म बाह्य जगतातीत ।
होते है हमसे अविरत ना शान्त - शान्तातीत ।।
८९. समाप्त होते कर्म -शान्त होवे हमारा मन ।
स्थिर रहे सुषुप्ति मे - न होते कर्म धन ।।
९०. चंचलावस्था - मन की - होवे तभी कर्म शक्य ।
कर्म से पहले होता - मानसिक चित्रीकरण ऐक्य ।।
९१. विषय वस्तु - प्राप्ती मे - मन संबधों से रहे आसक्ति ।
मन मे उठे कामना - मनोराग की तृप्ती हेतु अधीककर्म युक्ति ।।
९२. व्यक्तित्व मे अविघा - अज्ञान की हो अभिव्यक्ति ।
उसी के उस स्वरुप को कहा है रजोगुण वृत्ती ।।
९३. आवृत्त रहती है वस्तुये तमोगुण से जीस प्रकार ।
मन प्रालम्बित करे कल्पना वस्तुओ को देता आकार ।।

९४. होवे प्रदुषित मन-आंतरीक रजोगुण से व्यक्तित्व ।
तब यथार्थ ना देखा जाता वस्तुमात्रो को बहुत ।।
९५. यही-तमस-मानव-को बारम्बार देता है उपहार ।
तमस-से होवे पुनर्जन्मो का न टुटता व्यपार ।।
९६. मै स्वयं मन शरीर-बुद्धि हु समझकर भावनाओ विचारो के ।
वस्तुमात्राओ के जगत अधिकाधिक वासनाए व्यभिचारो के ।।
९७. यह वासनाए निशेष हेतु - नवीन देह की खोज करु ।
समाप्त होवे जन्म मरण वासनाओ को निशेष करु ।।
९८. यह चक्कर क्यो होता है, नही होवे आकलन सत्यतत्वका ।
होता है आवृत सत्यतत्व तमोगुणो से यह आकलन महत्व का ।।
९९. मनो विक्षेपो का प्रत्यक्ष क्या, कारण है गुरुमाई ।
कारण है तमोगुण आवृत्त माया यह उत्तर महताई ।।
१००. संबंध होवे चत्वारी बातो का तमोगुणोसे हे साधक ।
पहला है यथार्थ निर्णय का अभाव दुजे विपरीत निर्णय बाधक ।।
१०१. तिजे सुनो सत्यतत्वो हेतु, अस्पष्ट कल्पना रहते हुए ।
कमतरता रहे श्रद्धा की, कीसी बात मे ठहरते हुऐ ।।
१०२. चौथी बात बतात हु स्वामी विदेही को सुनो साधक ।
भुलना मत साक्षात्कार मार्ग मे शंका है चौथी बाधक ।।
१०३. लक्षण बताते तमोगुणो के साधना जिससे कमजोर रहे ।
सत्यतत्वो का अज्ञान, कर्म की अक्षमता यह निरंतर बनी रहे ।।
१०४. असमर्थ होवे समझना सही ढंगसे, सीर्फ करना है ।
इसीलीए कर्म करते है, मुर्खता रहे आश्चर्य कारक, तमोगुणो से कैसे तरना है ।।
१०५. सत्वगुण-स्वरुप-कार्य मे आदी शंकराचार्य कहते है ।
यह सदा पानी जैसा शुद्ध स्वरुप सत्वगुण रहता है ।।
१०६. जल जैसे सत्वगुण मिश्रीत रहे अनेकानेक वस्तुओ मे ।
किन्तु अपना ना बदले स्व-स्वरुप-रुप मे ।।
१०७. जल यह जल है, इसीलीए है यह शुद्ध केवल ब्रह्म ।
जल यह, आप भी है विशुद्ध H_2O बद्ध ।।
१०८. जब पानी को कहते है गंदापानी तब हो यह अर्थ ।
मिश्रीत है उसमे कुछ और दुसरा प्रदर्थ ।।
१०९. जब कहते गंदा पानी तब उसमे तरंगीत गंदगी, मिट्टी ।
गंदगी, मीट्टी निकाल बाहर पानी होवे पुन्हा स्वच्छ रत्ती ।।
११०. सत्वगुण यह रहता तमोगुणी मानव मे मी नित्य ।
पानी यह सत्वगुण गंदगी मीट्टी तमोगुण सातत्य ।।

१११. व्यक्ती के भितर सत्वगुण, तमोगुण रहे रजोगुण ।
तब वह रहे जन्म मरण हेतु कारणीभुत अवगुण ।।
११२. जहा रहे शुद्ध गुण सत्व वहा बुद्धि कार्य करे स्थिरता से ।
वहा न रहे आवरण ना विक्षेप रहे गंभीरता से ।।
११३. समय वह ऐसा, मन हो समाहित गहरी द्यानावस्थागत ।
बुद्धि रहे दिव्य-भव्य-सत्यतत्वो के सामने सम्मोहनगत ।।
११४. यह स्थिती जब आवृत्त हो तमोगुण से, रजोगुण से हो विक्षेपीत ।
तब देखे मन परे सत्यतत्वो के कुछ और वस्तु क्षेपीत ।।
११५. शरीर-बुद्ध-मन जब मुडे वस्तु विषयो की ओर ।
तब शरीर-बुद्ध-मन करे निर्माण वासना-भावना की डोर ।।
११६. वासनाओ की समाप्ती हेतु धारण होवे पुन्हा देहालय ।
एक देह से दुसरे मे जाना यह पुनर्जन्म संसार कहलाए ।।
११७. जिस प्रकार भानु दिन मे करे प्रकाशीत ।
वैसे ही साक्षात्कारलायक तत्व सत्वगुण द्वारा प्रेषित ।।
११८. तब वह सब तरफ-हर समय करे प्रकाशीत ।
अक्रिय एवम अचेतन वस्तुओ को पोषित ।।
११९. इंद्रिय दमन-मनोनिग्रह करते एक दुसरे को पोषक
एक का दमन ले जावे दुसरे को निग्रह निकट तोषक ।।
१२०. सत्य स्वरुप के चिंतन मे मन लग जाए सुमरणीत ।
होवे प्रप्ती ब्रह्मानंद की, शांती, व्यग्रता प्रणीत ।।
१२१. हे साधक जानो साक्षी भाव को जो तुम स्वयं हो ।
न राखे स्वयं को कर्मो मे, बनो द्रष्टा कर्मो के ब्रह्म हो ।।
१२२. मै हु अखण्ड बोध स्वरुप मुझमे नही भेद ।
मै सर्वत्र तत्वआत्मा हु न कोई है प्रभेद ।।
१२३. मै हु ब्रह्म से तदाकार, प्रकृति आवरण तादात्म्य नष्ट ।
जिनसे मिले प्रकृति आवरणो को पुष्टि, अव्दय - ब्रह्म मै स्पष्ट ।।
१२४. कामना-रहित-कामना रहे मुझ मै निष्काम बन जाऊ ।
मै पुर्ण ब्रह्म हु यह जान-मानकर पुर्ण काम बन जाऊ ।।
१२५. सर्व परिस्थिती गत रहे समदर्शी-स्पर्शी न बन जाऊ ।
सर्व जनगत समदृष्टि राखु महर्षि ही बन जाऊ ।।
१२६. देह भाव ना रहे मुजमे शिवभाव मे लग जाऊ ।
आत्मानुभुतिगत स्थित रहु मै ब्रह्मभाव जग जाऊ ।।
१२७. कहे स्वामी शिशु विदेही यह आदिशंकराचार्य कृत चुडामणी है ।
सरल भाव से प्रकाशित अर्थ वेदान्त रमणी मणी है ।।
इति श्री आत्मबोध रहस्य स्तव स्तोत्रं सम्पुरणम्